लेख

महिला फ़नकारों के फ़न को सलाम!

विद्या राव

काफ़ी वर्षों पहले एक पोस्टकार्ड का (जो अब कहीं खो गया है) मेरी मेज़ पर एक गौरवशाली मुकाम हुआ करता था। इस पोस्टकार्ड जिसका शीर्षक था, *महिला फ़नकार होने के फ़ायदे,* में बड़े ही उपहासपूर्ण तरीक़े से — बतौर फ़ायदे उन तमाम परेशानियों का ज़िक्र किया गया था जिनका सामना एक महिला फ़नकार अपने जीवन में करती है। मसलन एक फ़ायदा यह बताया गया था कि आप 'मां' बनने और 'कलाकार' होने के बीच चुनाव कर सकती हैं!!! या फिर 'एक महिला कलाकार को कला इतिहास की पुस्तकों मे 'फुटनोट' में जगह मिलना सुनिश्चित हो जाता है।' ये जुमले मेरे चेहरे पर कठिन समय में एक हल्की सी मुस्कान ले आते थे पर साथ-साथ मैं इन पर सोचने को भी बाध्य हो जाती थी। भारत में महिला कलाकारों की स्थिति क्या है— पहले क्या थी और आज के दौर में इसकी वास्तविकता क्या है— जटिल नहीं, पर असलियत क्या है?

वाकई भारत में एक महिला फ़नकार होने के मायने क्या हैं? उनके दर्जे, चुनाव, जीवन व काम पर पितृसत्ता कैसे असर डालती है? श्रोता और कलाविद् उन्हें कैसे देखते हैं? और सबसे ज़्यादा अहम— वे खुद अपने काम, ज़िंदगी और अपने आप को कैसे देखती हैं? एक अनकहे इतिहास ने मुझे बौखला दिया था। आमतौर पर यह माना जाता था कि 'औरतें गाती नहीं हैं' पर फिर भी मैंने बचपन और जवानी के दिनों में अनेक महिला गायिकाओं को सुना था। तो फिर इस विरोधाभास के मायने क्या थे?

इस तरह के कई सवाल मेरे ज़ेहन में कौंधते रहते थे। ये महज़ अकादमिक प्रश्न नहीं थे; इनके जवाबों में— फिर वे चाहे कितने अनिश्चित क्यों न हों— अपने आने वाले जीवन में मैं खुद को, एक औरत होने के नाते अपने काम, अपने संगीत, अपने लेखन और अपने जीवन को किस तरह देखती हूं— इस बात के भी संकेत निहित थे। इन सवालों के जवाब समझने की कोशिश में मैंने कई पारम्परिक गायिकाओं, तवायफ़ों को सुना, उनसे बातें की और गुमनामी में खो जाने वाले उनके व्यक्तित्व और हुनर को नज़दीकी से जाना-परखा।

रियाज़ करती बेगम अख़्तर

मेरे लिए समझ का एक महत्वपूर्ण समय वह था जब एक घरानेदार संगीतशास्त्री की पत्नी ने मुझसे कहा, "हम गाते नहीं हैं— गाना तवायफ़ों और पेशेवर औरतों का काम है।" पर मैं जानती थी कि यही औरत एक बेहतरीन गायिका थी— वह अनेक जटिल संगीत रचनाओं और रागों में निपुण थीं और उनकी बारीकियों और तकनीकों पर गहन समझ रखती थीं। अपने परिवार की दूसरी औरतों के साथ मिलकर उन्होंने जीवन से जुड़े अनेक उत्सवों, मौसमी जश्नों और तीज-त्योहारों पर अनेकों गीत रचे और गाये थे। उन्होंने मेरे साथ अपने परिवार की एक ऐसी महिला के बारे में भी बातचीत की थी जिन्हें एक उच्चकोटि

की गायिका समझा जाता था। हालांकि इस महान गायिका ने कभी सार्वजनिक रूप से गायन नहीं किया और न ही खुद को एक गायिका के तौर पर पेश किया परन्तु परिवार के युवा संगीतज्ञों को जटिल बंदिशों का ज्ञान उन्हीं से मिला था।

बातचीत के दौरान मुझे समझ में आया कि मेरी दोस्त के कहने का मतलब यह था कि उनके समुदाय में औरतें गाती तो थीं पर यह उनका 'काम' या 'पेशा' नहीं था और इसके लिए उन्हें कोई 'पैसा' नहीं मिलता था। तब मेरी नारीवादी सोच ने मुझे यह पूछने के लिए मजबूर कर दिया कि क्या जो ये औरतें कर रही थीं— यानी घरेलू गीतों की परम्परा को जारी रखकर, बच्चों-युवाओं को सिखाना, को क्या हम 'काम' नहीं मान सकते? यह सच है कि यह 'वेतनयुक्त काम' नहीं था, न ही इसे एक 'पहचान' के तौर पर पितृसत्तात्मक समाज में 'उत्पादक' काम का दर्जा दिया जाता था, पर मेरी राय में क्या इसको 'काम' का दर्जा दिया जा सकता था? बच्चे के जन्म पर गाये जाने वाले सोहर गीत, ब्याह के आशीर्वाद गीत, बारिश लाने वाले गीत, फ़सल का जश्न मानने वाले गीत, देवी को बेटी स्वरूप घर लाने के समय गाये जाने वाले गीत या किसी अपने के शोक के विरहा गीत— सभी ही औरतों द्वारा किये गये महत्वपूर्ण कामों का अभिन्न अंग हैं जिन्हें वे सदियों से गाती-बजाती चली आ रही हैं।

पर फिर उन औरतों का क्या जिनके लिए संगीत वास्तव में 'काम'— वेतनयुक्त काम है? उसे हम कैसे समझते-देखते हैं? और इससे ही जुड़े हैं पारम्परिक गायिकाओं के जीवन, काम और पहचान के सवाल।

तीसरी सदी से ही हम महिला फ़नकारों-कलाकारों के समूहों के बारे में सुनते आये हैं जिन्हें गणिका, नगरवधु और बाद के समय में कचनी, पत्रिनी, बेड़नी, तवायफ़, बाईजी के नामों से जाना जाता था— ये सभी हुनरमंद गायिकाएं और नर्तकियां हुआ करती थीं जिन्हें समुदाय में एक सम्मानजनक ओहदा हासिल था। उदाहरण के लिए वैशाली नगर की गरिमा और गौरव में वहां की कलाकार आम्रपाली का एक अहम योगदान था।

किसी तरह के दस्तावेज़ीकरण के अभाव में यह सुनिश्चित करना मुश्किल है कि ये औरतें विभिन्न मौकों पर किन रूपों में नाचती-गाती थीं। हालांकि पुराने यानी दसवीं सदी के आसपास मिलने वाले संगीत ग्रंथों में यह दर्ज है कि इन कलाकारों द्वारा गाई जाने वाली संगीत शैली भावनात्मक, अभिव्यक्ति में सराबोर, बेहद सौम्य और गरिमामय थी जिसका नृत्य की एक मनमोहक और निपुण शैली के साथ घनिष्ठ जुड़ाव था।

हमारे पास सबसे ठोस दर्ज उदाहरण बीसवीं सदी संगीत परम्परा के हैं और मैं अपनी बात आगे ले जाने के लिए इसी दौर की महिला कलाकारों पर ध्यान केंद्रित करूंगी।

इन कलाकारों के हुनर जटिल संगीत परम्पराओं के अनेक रूपों का ख़ज़ाना था— ठुमरी-दादरा, गज़ल और उनसे जुड़े संगीत के अन्य रूपों के साथ-साथ वे उन 'मर्दानी' शैलियों जैसे 'ख़याल', 'तराना' में भी पारंगत थीं— इनमें से एक अनोखी गायिका जानकी बाई *छप्पन छुरी* ने तो आने वाली नस्लों के लिए 'नात' और 'सोज़ख़्वानी' की भी रिकॉर्ड की गई विरासत छोड़ी है।

इस पुरालेख में कुछ बातों एकाएक हमारा ध्यान खींचतीं हैं— सबसे पहली, शालीन घरानेदार भाइयों की तुलना में औरतें अधिक उत्साही थीं, विश्वास और आसानी के साथ वे प्रश्रय के नए रास्तों पर चलने का हौसला रखती थीं। साथ ही वे अनेकों शैलियों में गा सकती थीं और गाती भी थीं। वे अपने संगीत का ज़रूरत अनुसार संदर्भ के साथ तालमेल आसानी से बैठाकर— तीन मिनट की एक रिकॉर्डिंग को बेहद खूबसूरती से नफ़स बनाने का हुनर रखती थीं और साथ ही महफ़िल में एक घंटे तक उसी बदिंश को रागों से सजाकर श्रोताओं का मन मोहने की भी क़ाबलियत रखती थीं।

पर यहां मैं एक बार फिर मेज़ पर रखे उसी पोस्टकार्ड पर वापस चली जाती हूं और सोचती हूं— पर उनके जीवन का क्या? समाज में उनका क्या दर्जा था? वे अपने बारे में क्या सोचती थीं?

उन्नीसवीं सदी के अंत और बींसवी सदी के शुरूआती समय में उत्तरी भारत के मध्यम वर्ग की औरतों के पास उत्तराधिकार अधिकार, शिक्षा का हक़ नहीं था और वे घर की चारदीवारी के भीतर ही रहती थीं। हालांकि बदलाव नज़र आ रहे थे पर इनके उदाहरण कुछ छिटपुट ही थे और ये आमतौर पर कुछ अलग ही थे।

दरबार में शामिल 'तवायफ़'

उस समय में शिक्षा पाने वाली औरतों में तवायफ़ें सबसे आगे थीं— वे न सिर्फ़ लिख-पढ़ सकती थीं परन्तु संगीत, नृत्य, कविता और फलसफ़े में भी निपुण थीं। इनमें से कई कुशल व्यवसायी थीं और अमीर भी। साथ ही उनकी राजनैतिक मसलों में रायशुमारी भी अहम थी। प्रख्यात, लेखक अब्दुल हालिम शरार अपनी किताब *'लखनऊ-द लास्ट फ़ेज़ ऑफ़ एन ओरिएंटल कल्चर'* में लिखते हैं कि लखनऊ के नवाब के दरबार में एक ख़ास तवायफ़ की शिरकत के बगैर अधिक लोगों का जमा करना मुमुकिन नहीं होता था।

मध्यम वर्ग में औरत का दर्जा पुरुष से कमतर था, परन्तु संगीतज्ञों में हालात कुछ अधिक जटिल थे। प्रमुख फ़नकार और गायिका होने के नाते, गानेवालियों को अपने साथी वाद्य बजाने वाले पुरुषों से ज़्यादा ऊंचा दर्जा हासिल था। एक बहुत नामचीन तबला नवाज़ के बारे में मैंने एक मशहूर किस्सा सुना है कि वे किस तरह तवायफ़ के कोठे के नीचे इंतज़ार में खड़े रहते थे कि कब उन्हें गायिका के साथ संगत करने के लिए बुलाया जायेगा। पर घरानेदार उस्तादों के सामने यही तवायफ़ें एक नम्र शिष्या की हैसियत रखती थीं।

हालांकि अनेक औरतों ने अपनी मां, मौसी या अन्य बुजुर्ग गाने वाली औरतों से संगीत सीखा था पर पुरुष उस्ताद की शार्गिदी से ही उन्हें बतौर कलाकार-गायिका एक वैध दर्जा मिल पाता था जो दिल बहलाने के लिए संगीत सीखने से अलग था।

उसी दौर की फ़िल्में देखने से हमें ऐसा महसूस होता है कि ये औरतें अपने पेशे से निजात पाकर, ब्याह करके एक इज़्ज़त की ज़िंदगी जीने की ख़्वाहिश रखती थीं। पर मैं समझती हूं कि ये सच्चाई भी और अधिक जटिल रही होगी। यह सही है कि ये गायिकाएं अपने दर्जे में आ रहे बदलाव— जहां एक सम्मानीय कलाकार की जगह उन्हें महज़ यौन कर्मी समझा जाने लगा था, से घबराई और नाखुश थीं। पर फिर भी एक फ़नकार-कलाकार के रूप में अपनी पहचान को वे संजोकर रखना चाहती थीं। लिहाज़ा कुछ तवायफ़ों ने बदलाव से बचने के लिए ब्याह कर लिए पर कुछ ने अपनी कला और अपनी आज़ादी को सहेज कर रखा। जैसा कि मुझे एक तवायफ़ ने बताया कि वे कभी भी शादी से मिलने वाली सुरक्षा के लिए अपना तवायफ़ का जीवन नहीं छोड़ सकतीं क्योंकि इसका मतलब होगा अपनी गायिकी को छोड़ देना।

अब समय बहुत बदल गया है। अब कोई भी औरत संगीत को अपना पेशा बना सकती है और बहुत औरतें ऐसा कर भी रही हैं। तवायफ़ें अब इतिहास के पन्नों में गुम होकर रह गई हैं। पर हमेशा की तरह मध्यम वर्ग की औरतों को मिलने वाले फ़ायदे इन्हीं तवायफ़ों की देन हैं जिन्होंने उस परम्परा को कायम रखा और अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए खुद को एक 'रोल मॉडल' की तरह पेश किया। यह अफ़सोसजनक बात है कि इन 'कलाकार' महिलाओं को, जिन्हें किसी ज़माने में एक सम्मानजनक दर्जा हासिल था, के बच्चों को आज समाज में बेग़ैरत की नज़र से देखा जाता है। उम्मीद है कि हमें आज़ादी की डगर दिखाने वाली इन फ़नकारों के साथ हो रही यह नाइंसाफ़ी भी एक दिन ज़रूर बदलेगी।

विद्या राव *जानी मानी शास्त्रीय संगीत गायिका व नारीवादी लेखिका हैं।*